लेश्या द्वारा व्यक्तित्व रूपान्तरण

मुमुक्षु शांता जैन

जैन विश्व भारती, लाडनूं, (राजस्थान)

मनुष्य जीवन का विश्लेषण हम जहां से भी शुरू करें, आगम सूक्त की अनुप्रेक्षा के साथ पहला प्रश्न उभरेगा— "अणेगचित्ते खलु अयं पुरिसे" मनुष्य अनेक चित्त वाला है।[1] वह बदलता हुआ इन्द्रधनुषी व्यक्तित्व है। विविध स्वभावों से घिरे मनुष्य को किस बिन्दु पर विश्लेषित किया जाए कि वह अच्छा है या दुरा? देश, काल व परिस्थिति के साथ बदलता हुआ मनुष्य कभी ईर्ष्यालु, छिद्रान्वेषी, स्वार्थी, हिंसक, प्रवंचक, मिथ्यादृष्टि के रूप में सामने आता है, तो कभी विनम्र, गुणग्राही, निःस्वार्थी, अहिंसक, उदार, जितेन्द्रिय और तपस्वी के रूप में। आखिर इस वैविध्य का तत्व कहां है? ऐसा कौन-सा प्रेरक बिन्दु है जो न चाहते हुए भी व्यक्ति द्वारा बुरे कार्य करवा देता है? ऐसा कौन-सा आधार है जिसके बल पर एक संन्यासी बिना भौतिक सम्पदा के आनन्द के अक्षय स्रोत तक पहुँच जाता है और दूसरा भौतिक सम्पदा से घिरा होकर भी प्रतिक्षण अशान्त, बेचैन, कुण्ठित और दुःखाक्रान्त होकर जीता है? ऐसे प्रश्नों का समाधान हम व्यवहार के स्तर पर नहीं पा सकते। जैन दर्शन ने चित्त के बदलते भूगोल को सम्यक् जानने के लिये और मनुष्य के बाह्य और आन्तरिक चेतना के स्तर पर घटित होने वाले व्यवहार को समझने के लिये लेश्या का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

लेश्या का निरूपण: परिभाषा

जैनों का लेश्या-निरूपण आजीवक, पूरण कश्यप, बुद्ध और महाभारत के व्यास के अचेलकत्व, जन्म, कर्म एवं अभिजातियों के विभिन्न दृष्टिकोणों पर आधारित विवरण से भिन्न हैं। जैनों की लेश्या का सम्बन्ध एक-एक व्यक्ति से है, समूह या जाति से नहीं। जैनों ने वर्ण के साथ अन्तर्भाव या आत्म-भाव का भी समन्वय किया है। इस सिद्धांत की हठयोग के छः चक्रों से समकक्षता है।

वैचारिक धारणाओं और अमूर्त तत्वों को दृष्टिगोचर उपमानों के माध्यम से व्यक्त करने की परम्परा पर्याप्त प्राचीन है। वर्ण अथवा रंग की दृश्यता एवं प्रभाव ने भारतीय चिन्तकों को सदा मोहित किया है। इसीलिये उन्होंने

सारणी १. वर्णों द्वारा विभिन्न तत्वों का निरूपण

गति (कृष्ण)	धर्म (बुद्ध)	कर्म (पंतजलि)	प्रकृति (श्वेता०)	प्रकृति	अन्तर्भाव (जैन)	प्राणिवर्ण (महाभारत)	अभिजाति (पूरण कश्यप)
कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण	पीत पृथ्वी	कृष्ण	कृष्ण	कृष्ण
शुक्ल	शुक्ल	शुक्ल	शुक्ल	श्वेत, बैंगनी जल	नील कापोत	धूम्र	—
		शुक्ल-कृष्ण	लोहित	लाल तेजस	तेजस	नील	नील
				नील वायु	पद्म	रक्त	लोहित
		अशुक्ल-अकृष्ण		कृष्ण नीलम आकाश	शुक्ल	शुक्ल हरित धूम्र	शुक्ल हरित पूर्णशुक्ल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्म, कर्म, गति, प्राणि, प्रकृति आदि को विशिष्ट वर्णों के रूप में व्यक्त कर वर्णित किया है।[२] सारणी १ से स्पष्ट है कि महाभारत और जैनों का प्राणियों एवं अन्तर्भावों का विभाजन समान-सा लगता है क्योंकि इन्हें सुख, दुःख और सहिष्णुता से सम्बन्धित किया गया है। फिर भी, जैनाचार्यों का अन्तर्भावों का लेश्या पर आधारित निरूपण तीक्ष्ण एवं गहन विचारणा का निरूपण है। इसमें वर्ण का केवल भौतिक रूप (द्रव्य लेश्या) ही नहीं लिया गया है, उसका भावात्मक चरित्र भी प्रकट किया गया है। जैन शास्त्रों के अवलोकन से पता चलता है कि 'लेश्या' शब्द के अर्थ का भौतिक रूप से लेकर आध्यात्मिक रूप तक संभवतः क्रमिक विकास हुआ है। यह सारणी २ से स्पष्ट होता है। संभवतः रूप-रसादि में वर्ण के सर्वाधिक दृश्य एवं प्रभावकारी होने से ही जीवों के बहिरंग एवं अन्तर-रूपों को मनोवैज्ञानिक रूप से प्रकट करने के लिये उसे चुना गया। मानव के अन्तर-रूप को उसकी बहिरंग बहुरंगी आभा प्रकट रूप से व्यक्त करती है। यह बहिरंग रूप का आभा द्रव्य लेश्या कहलाती है, यह भौतिक है, पौद्गलिक है। देवेन्द्र मुनि के अनुसार, इसके

सारण २. लेश्या शब्द के अर्थ

१.	वर्ण, प्रभा, रंग	प्रज्ञापना, जीवाभिगम आदि
१.	आणविक आभा, कान्ति, प्रभा, छाया	उत्तराध्ययन वृत्ति
२.	मनोयोग, विचार, प्रशस्त वृत्ति	आचारांग
३.	छाया पुद्गलों से प्रभावित होने वाले जीव परिणाम	भगवती आराधना
४.	आत्मा और कर्म का लेपक या आत्मीकरण माध्यम	गोम्मटसार जीवकांड
५.	वर्ण और आणविक आभा	,,
६.	आत्मा और कर्म का सम्बन्ध करने वाली प्रवृत्ति	वीरसेन
७.	कषायों के उदय से अनुरंजित योग प्रवृत्ति	पूज्यपाद, अकलंक, नेमचन्द्र
८.	पौद्गलिक पर्यावरण, पुद्गल समूह	देवेन्द्र मुनि

पुद्गल कषाय, मन और भाषा से स्थूल एवं वैक्रियक शरीर, शब्द, रूप, रस, गंध आदि से सूक्ष्म हैं। यह मन्तव्य पुनर्विचार के योग्य है क्योंकि रस, गंध और मन के पुद्गलों को कोटि अणुमय होती है। इनका विस्तार $१०^{-८}$ सेमी० के लगभग माना जा सकता है। इसके विपर्यास में रूप, कषाय, शब्द या भाषा ऊर्जारूप होते हैं। इनका विस्तार अणुओं से पर्याप्त अल्पतर होता है। इसलिये विचार एवं प्रवृत्तियों के पुद्गल उपरोक्त दोनों कोटियों से सूक्ष्मतर होते हैं। इनके द्रव्यमन से स्थूलतर होने का प्रश्न ही नहीं उठता। यह सही है कि द्रव्यलेश्या के पुद्गल भावलेश्या से स्थूल होते हैं। फिर भी ये कर्म पुद्गलों से सूक्ष्मतर होते हैं। भगवती सूत्र[३] में भी बताया गया है कि कार्मणशरीर, मनयोग एवं वचनयोग चतुस्पर्शी (ऊर्जात्मक) होते हैं और औदारिक वैक्रियक, आहारक एवं तैजस शरीर अष्टस्पर्शी होते हैं।

लेश्याओं के विवरण के विविधरूप और महत्वपूर्ण विवरण

जैन शास्त्रों में लेश्याओं का विस्तृत वर्णन पाया जाता है। उत्तराध्ययन[४] में इन्हें ग्यारह प्रकार से, अकलंक[५] और नेमचंद्र ने सोलह प्रकार से और प्रज्ञापना[६] में इसे पन्द्रह अधिकारों के रूप में वर्णित किया गया है। इनमें अनेक प्रकार समान हैं (सारणी ३) पर कुछ विशेष भी हैं। इन पर चर्चा करना इस लेख का अभीष्ट नहीं है। फिर भी, कुछ शास्त्रीय विवरण सारणी ४ में दिये गये हैं। इनमें वर्णों से सम्बन्धित आधुनिक वैज्ञानिक खोजों के निष्कर्ष भी दिये गये हैं। इससे वर्णों के मन, शरीर एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रभावों का सहज ही भान हो जाता है। ये प्रभाव ही लेश्याध्यान के बीज हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारणी ३. लेश्या-वर्णन के विविध प्रकार या अनुयोगद्वार

१. उत्तराध्ययन	२. प्रज्ञापना	३. अकलंक और नेमचन्द्र
नाम	—	निर्देश
वर्ण	वर्ण	वर्ण
रस	रस	—
गंध	गंध	—
स्पर्श	स्पर्श	स्पर्शन
परिणाम	परिणाम	परिणाम
लक्षण	—	लक्षण
गति	गति	गति
आयुष्य	—	काल
स्थिति	—	अन्तर
स्थान	स्थान	—
	अल्पबहुत्व	अल्पबहुत्व
	प्रदेश	—
	वर्गणा	—
	अवगाह	क्षेत्र
	उत्पाद	संख्या
	उद्वर्तना	संक्रमण
	ज्ञान	कर्म
	दर्शन	—
	(१–४ प्रशस्तादि चार विकल्प)	स्वामित्व
		साधन
		(औदयिक) भाव

सारणी ४ से अनेक प्रकार की सूचनायें प्राप्त होती हैं। तेजस और पद्म लेश्या के वर्ण के विषय में श्वेतांबर और दिगम्बर परम्पराओं में भिन्नता है। जहाँ आगम इन्हें क्रमशः लाल (बालसूर्य) और पीला (हल्दी) रंग का मानते हैं, वहाँ अकलंक आदि आचार्य इन्हें क्रमशः स्वर्ण (पीला) एवं पद्म (लाल) मानते हैं। यह मान्यता आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से, वर्ण के तरंग-दैर्घ्य के आधार पर भी उचित है। गेलडा[२] ने इसे तर्कसंगत रूप में ही प्रस्तुत किया है। अतः इन लेश्याओं से सम्बन्धित विवरणों को इसी रूप में लेना चाहिये। वस्तुतः इन विवरणों में मात्र प्रभावों की कोटि में ही विशेषता है। पीतिमा एवं लालिमा, रितुओं के परिवर्तन के समय, जगत में वासन्ती क्रान्ति एवं विकास की प्रतीक है।[१०] सामान्य जन के लिये ये वर्ण प्राणशक्ति, जीवनशक्ति, एवं संसार के उद्भव व विकास की कामना एवं प्रवृत्ति के प्रेरक हैं। ये भौतिक जीवन की नवता के प्रतीक हैं। परन्तु, जैसे ये वर्ण भौतिक क्रान्ति के प्रतीक हैं, उसी प्रकार ये आध्यात्मिक क्रान्ति के भी प्रतीक माने गये हैं। बौद्ध भिक्षुओं के एवं सन्यासियों के पीत एवं गैरिक वस्त्रों की परम्परा उनके उत्कृष्ट अध्यात्म विकास की प्रेरणा मानी गई है। वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय दृष्टि से पीला रंग त्रिकोणी मणिपुर चक्र, अग्नितत्व और मानसिक स्थिरता एवं प्राणशक्ति का प्रतीक है, वहीं लाल रंग दृढ़ता, स्थिरता एवं उत्साह का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सारणी ४. वर्णों या लेश्याओं का शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक विवरण

	कृष्ण	नील	कापोत	पीत, तैजस	पद्म	शुक्ल
१. वर्ण समकक्षता (वैज्ञानिक)	कृष्ण	नील	आकाश-नील	पीला	लाल	सफेद
२. लक्षण	क्रूर, हिंसक	ईर्ष्यालु, स्वार्थी, क्षुद्र, लोलुपी	वक्र, मायावी	नम्र, पापभीरु	उपशांत अल्पकषायी	शांत, जितेन्द्रिय, ध्यानी
३. वर्ण (श्वेतांबर मान्यता)	अंजन, खंजन आदि १७ काले पदार्थों के समान काला	वैडूर्य, अशोक आदि १९ प्रकार के नीले पदार्थों के समान नीला	अलसी-पुष्प, कोयल पंख आदि ९ प्रकार के पदार्थों के समान भूरा (काला + लाल)	गेरू, तरुणसूर्य आदि २४ प्रकार के पदार्थों के समान लाल	हरताल, हल्दी आदि २३ प्रकार के पदार्थों के समान पीला	दुग्धधारा, शंख आदि ५ पदार्थों के समान श्वेत
४. वर्ण (दिग० मान्यता)[५]	भ्रमर के समान काला	मयूरकंठ-सा नीला	कबूतर के समान	स्वर्ण-सा पीला	पद्म-सा लाल	शंख-सा श्वेत
५. रस	बज्र कटु	चिरायते के समान तीखा	कषायला	खटमीठा	मधु मिष्ट	गुड़ के समान मीठा
६. गंध	दुर्गंध	दुर्गंध	दुर्गंध	सुगंध	सुगंध	सुगंध
७. स्पर्श	शीत, रुक्ष	शीत, रुक्ष	शीत, रुक्ष	उष्ण, स्निग्ध	उष्ण, स्निग्ध	उष्ण, स्निग्ध
८. तत्व	आकाश	वायु	आकाश	पृथ्वी	तैजस	जल
९. प्रकृति	क्रोधभावना	—	भक्तिभावना	तर्कभावना	कामवासना	शान्ति
१०. मन पर प्रभाव	मोह, असंयम, क्रूरता की वृत्ति	ईर्ष्या, असहिष्णुता की वृत्ति	वक्रता, कुटिलता की वृत्ति	कषायनाशन वृत्ति	सरलता, विनम्रता	शांति, जितेन्द्रियता
११. शरीर पर प्रभाव	—	स्नायु-दौर्बल्य नाश,	—	मस्तिष्कशक्ति,	स्नायुमंडल में	गाढ़निद्रा
	—	आमाशय रोग नाश	—	रोग नाशन	स्फूर्ति	
१२. प्रकृति पर प्रभाव	अस्वस्थता	शीतलता-संचार	शीतलता	अल्प ऊष्मावर्धक	ऊष्मावर्धक	समप्रकृति

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

१३. शास्त्रीय एवं वैज्ञानिक प्रकृति[७]	—	(१) षोशशदलीय विशुद्धिचक्र, स्फूर्ति, निद्रा एवं आकाश का प्रतीक, सतोगुण की प्रवृत्ति	—	(१) दशदलीय मणिपुर चक्र, अग्नितत्व, मनस्थिरता, प्राणशक्ति का प्रतीक, रजोगुण की प्रवृत्ति	(१) चतुष्फलकीय मूलाधार चक्र का प्रतीक, पृथ्वी एवं स्थूलशक्ति का प्रतीक, तमोगुणी	(१) शुद्धता, पूर्णता एवं सहस्रार चक्र का प्रतीक, सतोगुणी प्रवृत्ति
	—	(२) अस्थिनिर्मायक एवं जीवाणु-प्रतिरक्षी	—	(२) क्षार-गुणोत्पादी	(२) विटामिन बी. एवं ई. का प्रभाव	(२) जीवनीशक्ति प्रदायक
	—	(३) शांति, ज्ञान, बुद्धि, अन्तःप्रज्ञा, उच्चतर चेतना का विकासी	—	—	(३) क्रोध, दृढ़ता, स्थिरता, संकल्प, शक्ति, उत्साह प्रदान करता है, टानिक बनाता है	(३) शान्ति का प्रतीक
	—	(४) जामुन, अखरोट, बादाम, अंगूर आदि उपयोगी	—	(४) सेव, केला, नीबू, ककड़ी आदि उपयोगी	(४) टमाटर, तरबूज, गाजर, सोयाबीन, आदि उपयोगी	(४) आलू, दूध, आदि उपयोगी
१४. आवृत्ति	—	$१०^{-५}$–$१०^{-६}$A	—	$१०^{-५}$A	$१०^{-४}$A	$१०^{-१०}$A
१५. भाव	अशुद्ध, अशुभ, अधर्म, अप्रशस्त	अशुद्ध, अशुभ, अधर्म, अप्रशस्त	अशुद्ध	शुद्ध, शुभ, धर्म, प्रशस्त	शुद्ध, शुभ, धर्म, प्रशस्त	प्रशस्त
१६. आयुष्य, जघन्य	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त
उत्कृष्ट	३३ सागर + १ अन्त०	१० सागर + पल्य/असं०	३ सागर + पल्य/असं०	२ सागर + पल्य/असं०	१० सागर + १ मुहूर्त	३३ सागर + १ मुहूर्त

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

प्रतीक है। इसके विपर्यास में, गैरिक वर्ण उदासीन एवं उच्चतम चेतना का उत्प्रेरक माना गया है। फलतः पीतवर्ण से गैरिक एवं रक्तवर्ण अधिक अध्यात्मप्रमुख है। इस प्रकार वर्ण या रंग अपेक्षा दृष्टि से भौतिक एवं आध्यात्मिक-दोनों प्रकार के प्रभावों को प्रदर्शित करते हैं। भौतिक स्तर पर पीले और लाल रंगों को तमोगुणी या रजोगुणी कहा जा सकता है, पर आध्यात्मिक स्तर पर तो इन्हें सतोगुणी ही कहना चाहिये। इसीलिये इनको ऊष्मावर्धक, कषायनाशक, सरलताकारी माना गया है। वस्तुतः सभी वर्णों के भौतिक एवं आध्यात्मिक प्रभाव होते हैं और सापेक्षतः भौतिक एवं मानसिक परिस्थितियों में विभिन्न प्रकार के विपरीत प्रभाव प्रदर्शित करते हैं। इसीलिये शास्त्रों में इन्हें उभय प्रकार का बताया गया है।

लेश्या का धार्मिक महत्व

जैन दर्शन में लेश्या का सिद्धान्त अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कर्मशास्त्रीय भाषा में लेश्या हमारे कर्म-बन्धन और मुक्ति का कारण है। यद्यपि जीवात्मा स्फटिक मणि के समान निर्मल और पारदर्शी है, पर लेश्या के माध्यम से आत्मा का कर्मों के साथ श्लेष या चिपकाव होता है।[८] इसी के द्वारा आत्मा पुण्य और पाप से लिप्त होती है।[९] कषाय द्वारा अनुरंजित योग-प्रवृत्ति के द्वारा होने वाले भिन्न-भिन्न परिणामों को, जो कृष्णादि अनेक रंग वाले पुद्गल विशेष के प्रभाव होते हैं, लेश्या कहा जाता है। कर्म-बन्धन के दो कारण हैं—कषाय और योग। कषाय होने पर लेश्या में चारों प्रकार के बन्ध होते हैं। प्रकृति और प्रदेश बन्ध योग से होते हैं। स्थिति तथा अनुभाग बन्ध कषाय से होते हैं।[१०]

कर्मशास्त्रीय भाषा में लेश्या आस्रव और संवर से जुड़ी है। आस्रव का अर्थ कर्मों को भीतर आने देने का मार्ग है। जब तक व्यक्ति का मिथ्या दृष्टिकोण रहेगा, मन-वचन-शरीर पर नियन्त्रण नहीं होगा, राग-द्वेष की भावना से मुक्त नहीं बन पायगा, तब तक वह प्रतिक्षण कर्म-संस्कारों का संचय करता रहेगा। आगमों में लेश्या के लिये एक शब्द आया है—"कर्म निर्झर"।[११] लेश्या कर्म का प्रवाह है। कर्म का अनुभाव-विपाक होता रहता है। इसलिये जब तक आश्रव नहीं रुकेगा, लेश्याएं शुद्ध नहीं होगी। लेश्या शुद्ध नहीं होगी तो हमारे भाव, संस्कार, विचार और आचरण भी शुद्ध नहीं होंगे। इसलिये संवर की जरूरत है। संवर भीतर आते हुए दोष प्रवाह को रोक देता है। बाहर से अशुभ पुद्गलों का ग्रहण जब भीतर नहीं जाएगा, राग-द्वेष नहीं उभरेंगे, तब कषाय की तीव्रता मन्द होगी, कर्म बन्ध की प्रक्रिया रुक जाएगी।

लेश्या का आधुनिक विवेचन

हम दो व्यक्तित्वों से जुड़े है: १. स्थूल व्यक्तित्व २. सूक्ष्म व्यक्तित्व। इस भौतिक शरीर से जो हमारा सम्बन्ध है, वह स्थूल व्यक्तित्व है। इसको जानने के साधन हैं—इन्द्रियां, मन और बुद्धि। पर सूक्ष्म व्यक्ति को इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि द्वारा नहीं जाना जा सकता। जैन दर्शन में स्थूल शरीर को औदारिक और सूक्ष्म शरीर को तैजस तथा कार्मण शरीर कहा है। आधुनिक योग साहित्य में स्थूल शरीर को फिजिकल बॉडी (Physical body) और सूक्ष्म शरीर को ऍथरीक बॉडी (Etheric body), तेजस शरीर को ऐस्ट्रल बॉडी (Astral body) कार्मण शरीर को कार्मिक बॉडी (Karmic body) कहा है। लेश्या दोनों शरीर के बीच सेतु का काम करती है। यही वह तत्व है जिसके आधार पर व्यक्तित्व का रूपान्तरण, वृत्तियों का परिशोधन और रासायनिक परिवर्तन होता है।

लेश्या को जानने के लिये सम्पूर्ण जीवन का विकास क्रम जानना भी जरूरी है। हमारा जीवन कैसे प्रवृत्ति करता है? अच्छे, बुरे संस्कारों का संकलन कैसे और कहाँ से होता है? भाव, विचार, आचरण कैसे बनते हैं? क्या हम अपने आपको बदल सकते हैं? इन सबके लिये हमें सूक्ष्म शरीर तक पहुँचना होगा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आगम साहित्य में सूक्ष्म व्यक्तित्व से स्थूल व्यक्तित्व तक आने के कई पड़ाव है। इनमें सबसे पहला है—चैतन्य (मूल आत्मा), उसके बाद कषाय का तन्त्र, फिर अध्यवसाय का तन्त्र। यहाँ तक स्थूल शरीर का कोई सम्बन्ध नहीं है। ये केवल तेजस शरीर और कर्म शरीर से ही सम्बन्धित हैं। अध्यवसाय के स्पन्दन जब आगे बढ़ते हैं, तब वे चित्त पर उतरते हैं, भावधारा बनती है, जिसे लेश्या कहते हैं। लेश्या के माध्यम से भीतरी कर्म रस का विपाक बाहर आता है, तब पहला साधन बनता है, अन्तःस्रावी ग्रन्थि तंत्र। इनके जो स्राव है, वे कर्मों के स्राव से प्रभावित होकर आते हैं। भीतरी स्राव से जो रसायन बनकर आता है, उसे लेश्या अध्यवसाय से लेकर हमारे सारे स्थूल तन्त्र तक यानी अन्तःस्रावी ग्रन्थियों और मस्तिष्क तक पहुँचा देती है। ग्रन्थियों के हार्मोन्स रक्त-संचार तन्त्र के माध्यम से नाड़ी तन्त्र के सहयोग से अन्तर्भाव, चिन्तन, वाणी, आचार और व्यवहार को संचालित और नियन्त्रित करते हैं। इस प्रकार चेतना के तीन स्तर बन गए :

१. अध्यवसाय का स्तर : जो अति सूक्ष्म शरीर के साथ काम करता है।

२. लेश्या का स्तर : जो विद्युत शरीर-तेजस शरीर के साथ काम करता है।

३. स्थूल चेतना का स्तर : जो स्थूल शरीर के साथ काम करता है।[12]

सूक्ष्म जगत में सम्पूर्ण ज्ञान का साधन अध्यवसाय है। स्थूल जगत में ज्ञान का साधन मन और मस्तिष्क है। मन मनुष्य में होता है, विकसित प्राणियों में होता है, जिनके सुषुम्ना है, मस्तिष्क है; यह प्राण की ऊर्जा से आत्मप्रतिष्ठित होता है। पर अध्यवसाय सब प्राणियों में होता है। वनस्पति जीव में भी होता है। कर्मबन्ध का कारण अध्यवसाय है। असंज्ञी जीव मनशून्य, वचन शून्य और क्रियाशून्य होते है, फिर भी उनके अठारह पापों का बन्ध सतत होता रहता है, क्योंकि उनके भीतर अविरति है, अध्यवसाय है।[13] लेश्या बिना स्नायविक योग के क्रियाशील रहती है। इसलिये लेश्या का बाहरी और भीतरी दोनों स्वरूप समझकर व्यक्तित्व का रूपान्तरण करना होता है।

लेश्या के दो भेद हैं—द्रव्य लेश्या और भाव लेश्या। पहली पुद्गलात्मक होती है और भाव लेश्या आत्मा का परिणाम विशेष है, जो संक्लेश और योग से अनुगत है। मन के परिणाम शुद्ध-अशुद्ध दोनों होते हैं और उनके निमित्त भी शुभ-अशुभ दोनों प्रकार के होते हैं। निमित्त को द्रव्य लेश्या और मन के परिणाम को भावलेश्या कहा है। इसीलिये लेश्या के भी दो कारण बतलाए हैं— निमित्त कारण और उपादान कारण। उपादान कारण है—कषाय की तीव्रता और मन्दता। निमित्त कारण है–पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण। दूसरे शब्दों में लेश्या का बाहरी पक्ष है योग, भीतरी पक्ष है कषाय। मन, बचन, काया की प्रवृत्ति द्वारा पुद्गल परमाणुओं का ग्रहण होता है। इनमें वर्ण, गन्ध,रस, स्पर्श सभी होते हैं। वर्ण/रंग का मन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। रंगों की विविधता के आधार पर मनुष्य के भाव, विचार और कर्म सम्पादित होते हैं। इसलिये रंग के आधार पर लेश्या के छः प्रकार बतलाए हैं जिनका विवरण सारणी ४ में दिया जा चुका है।

रंग का निरूपण

रंग की न केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से ही व्याख्या की गई है, अपि तु आज विज्ञान की सभी शाखाओं में इसके महत्व पर प्रकाश डाला जा रहा है। भौतिकीविदों, तंत्र-मन्त्र शास्त्रियों, शरीर-शास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों ने अपने स्वतंत्र अध्ययनों से बताया है कि रंग चेतना के सभी स्तरों पर जीवन में प्रवेश करता है। रंग को जीवन का पर्याय माना गया है। वैज्ञानिकों ने स्पेक्ट्रम के माध्यम से सात रंगों की व्याख्या की है। उनके अनुसार प्रकाश तरंग के रूप में होता है और प्रकाश का रंग उसके तरंग दैर्ध्य पर आधारित है। तरंगदैर्ध्य और कम्पन की आवृत्ति परस्पर विलोमतः सम्बन्धित है। तरंग दैर्ध्य के बढ़ने के साथ कम्पन की आवृत्ति कम होती है और उसके घटने के साथ

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

बढ़ती है। सूर्य का प्रकाश प्रिज्म में से गुजरने पर विक्षेपण के कारण सात रंगों में विभक्त दिखाई देता है। उस रंग-पंक्ति को स्पेक्ट्रम कहते हैं। इसके सात रंग हैं—लाल, नारंगी, पीला, हरा, नीला, जामुनी और बैंगनी। इनमें लाल रंग की तरंग-दैर्ध्य सबसे अधिक होती है, बैंगनी की सबसे कम। दूसरे शब्दों में लाल रंग की कम्पन आवृत्ति सबसे कम और बैंगनी रंग की सबसे अधिक होती है। दृश्य प्रकाश में जो विभिन्न रंग दिखाई देते हैं, वे विभिन्न कम्पनों की आवृत्ति या तरंग दैर्ध्य के आधार पर होते हैं। रंग और प्रकाश दो नहीं। प्रकाश का ४१वां प्रकम्पन रंग है। इसका महासागर सूर्य से निकलता है, वह शक्ति और ऊर्जा का महास्रोत होता है। रहस्यवादियों की दृष्टि में रंग की एकरूपता, जो हम सृष्टि में चारों ओर देखते हैं, वह दैवी मस्तिष्क की प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति है। यह प्रकाश तरंगों के रूप में एकमेव जीवन-तत्व की ब्रह्माण्डीय प्रस्तुति है।[१४]

तन्त्र या रहस्यवादियों ने सात रंगों के आधार पर सात किरणें मानी है, जिन्हें वे जीवन विकास के आरोहण क्रम में स्वीकार करते हैं। प्रत्येक किरण को विकासवादी युग का प्रतीक माना है। सात किरणें सृष्टि के सात युगों को दर्शाती हैं। आध्यात्मिक ज्ञान, जिसे प्रकाश का प्रभु माना जाता है और जो विकास का मार्गदर्शन करता है, को सात किरणों की आत्मायें भी कहा जाता है। उनकी मान्यता है कि किरणें अनन्त शक्ति और उद्देश्य की पूर्णता है जो मूलस्रोत से निकलती है और जिन्हें सर्वशक्तिमान प्रज्ञा द्वारा निर्देशन मिलता है। सात ब्रह्माण्डीय किरणों में प्रथम तीन किरणों-लाल, नारंगी और पीली से संबधित प्रथम तीन युग बीत गए है। अब हम चौथे युग यानी हरे रंग में जी रहे हैं, जो बीच का रंग है। या यूं कहें कि एक ओर संघर्ष, कटु अनुभव का निम्नयुग और दूसरी ओर आत्मिक विकास तथा गुणों का श्रेष्ठ युग; इसके बीचोंबीच हरा रंग है। इससे आगे भावी दृष्टिकोण नीली किरणों के उच्च प्रकम्पनों की ओर आगे बढ़ा है और यह विकास अधिकाधिक श्रेष्ठ स्थिति में नील और बैंगनी तरंगों तक विकसित होता जाएगा, जब तक हम सप्तमुखी किरण विभाजन के अन्त तक नहीं पहुँच जाएंगे।[१५]

रंगों के आधार पर मनुष्य की जाति, गुण, स्वभाव, रूचि, आदर्श आदि की व्याख्या करने की भी एक परम्परा चली। महाभारत में चारों वर्णों के रंग भिन्न-भिन्न बतलाये हैं। ब्राह्मणों का श्वेत, क्षत्रियों का लाल, वैश्यों का पीला और शुद्रों का काला।[१६] जैन साहित्य में चौबीस तीर्थंकरों के भिन्न-भिन्न रंग बतलाये गये हैं। पद्मप्रभु और वासुपूज्य का रंग लाल, चन्द्रप्रभु और पुष्पदन्त का श्वेत, मुनिसुव्रत और अरिष्टनेमि का रंग कृष्ण, मल्लि और पार्श्वनाथ का रंग नीला और शेष सोलह तीर्थंकरों का रंग सुनहरा पीला माना गया है। ज्योतिष विद्या के अनुसार ग्रह मानव के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं। उनकी विपरीत दशा में सांसारिक और आध्यात्मिक अभ्युदय में विविध अवरोध उत्पन्न होते हैं। इन अवरोधों को निष्क्रय बनाने के लिये ज्योतिष शास्त्री अमुक ग्रह को प्रभावित करने वाले अमुक रंग के ध्यान का प्रावधान बताते हैं, विभिन्न रंगों के रत्न व नगों के प्रयोग के लिये कहते हैं।

शरीरशास्त्री मानते हैं कि रंग हमारे जीवन की आन्तरिक व्याख्या है। अनेक प्रयोगों द्वारा यह ज्ञात किया जा चुका है कि रंगों का व्यक्ति के रक्तचाप, नाड़ी और श्वसन गति एवं मस्तिष्क के क्रियाकलापों पर तथा अन्य जैविकी क्रियाओं पर विभिन्न प्रभाव पड़ता है। प्रो० एलेक्जेन्डर रॉस का मानना है कि रंग की विद्युत-चुम्बकीय ऊर्जा किसी अज्ञात रूप में हमारी पिट्यूटरी और पीनियल ग्रंथियों तथा मस्तिष्क की गहराई में विद्यमान हायपोथेलेमस को प्रभावित करती है। वैज्ञानिकों के अनुसार हमारे शरीर के ये अवयव अन्तःस्रावी ग्रंथि तन्त्र का नियमन करते हैं जो स्वयं शरीर के अनेक मूलभूत प्रतिक्रियाओं का नियन्त्रण करते हैं। रंग हमारे शरीर, मन, विचार और आचरण से जुड़ा है। सूर्य किरण या रंग चिकित्सा के अनुसार शरीर रंगों का पिण्ड है। हमारे शरीर के प्रत्येक अवयव का अलग-अलग रंग है। सूक्ष्म कोशिकाएँ भी रंगीन है। वाणी, विचार, भावना सभी कुछ रंगीन है। इसीलिये जब कभी शरीर में रंगों के प्रकम्पनों का सन्तुलन बिगड़ जाता है, तो व्यक्ति अस्वस्थ हो जाता है। रंग चिकित्सा पुनः रंगों का सामंजस्य स्थापित करके स्वस्थता प्रदान करती है।[१८]

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आज के मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि व्यक्ति के अन्तर मन को, अवचेतन मन को और मस्तिष्क को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला तत्व है—रंग। रंग स्वभाव को बतलाने का सही मार्गदर्शक है। मनोविज्ञान ने रंगों के आधार पर व्यक्तित्व का विश्लेषण किया है। मुख्यतः व्यक्तित्व के दो प्रकार हैं: १. बहिर्मुखी, २. अन्तर्मुखी। रंग विशेषज्ञ एन्थोनी एल्डर का कहना है कि बहिर्मुखी जीवन लालिमा प्रधान होता है। अन्तर्मुखी जीवन में नीलाकाश जैसी उदात्त मनः स्थिति होती है। पीले रंग को कर्मठता, तत्परता और उत्तरदायित्व निर्वाह की भाव चेतना का प्रतीक माना है। हरे रंग को बुद्धिमता और स्थिरता का प्रतिनिधि माना है। एल्डर कहते हैं कि स्वभावगत विशेषताओं को घटाने-बढ़ाने के लिये उन रंगों का उपयोग करना चाहिये, जिनमें अभीष्ट विशेषताओं का समावेश है।

एस० जी० जे० ओसले के अनुसार—रंग के सात पहलू बताए गए हैं रंग—१. शक्ति देता है, २. चेतनाशील होता है, ३. चिकित्सा करता है, ४. प्रकाशित करता है, ५. आपूर्ति करता है, ६. प्रेरणा देता है तथा ७. पूर्णता प्रदान करता है।[१९] हेल्थ रिसर्च पब्लिकेशन, कैलिफोर्निया द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट में यह सिद्ध किया है कि बहिर्मुखी लोग गर्म रंग पसन्द करते हैं। अन्तर्मुखी लोग ठण्डे रंग पसन्द करते हैं क्योंकि उनको बाहरी उत्तेजकों की आवश्यकता नहीं होती हैं। भावना प्रधान व्यक्ति रंग के प्रति मुक्तरूप से प्रतिक्रिया करते हैं। भावनाहीन व्यक्ति को प्रायः रंग से आघात पहुँचता है। ये कठोर व्यक्तित्व वाले होते हैं और रंग के श्रेष्ठ व सूक्ष्म प्रकम्पनों से अप्रभावित रहते हैं।

कौन-सा रंग हमारे व्यक्तित्व पर कैसा प्रभाव डालता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि रंग किस प्रकार का है? भावों को समझने के लिये भगवान् महावीर ने लेश्या को शुभ-अशुभ, रूक्ष-स्निग्ध, ठण्डी-गर्म, प्रशस्त-अप्रशस्त बतलाया है।[२०] आज के रंग विज्ञान में भी लेश्या का संवादी सूत्र उपलब्ध होता है। रंग के दो प्रकार बतलाए हैं—चमकदार-धुंधले, अन्धकारमय-प्रकाशमय, गर्म-ठण्डे। लेश्या की प्रकृति व्यक्तित्व की व्याख्या करती है। कृष्ण, नील व कापोत वर्ण यदि प्रशस्त है, चमकदार है, तो वे शुभ माने जाएंगे और पीला, लाल और सफेद रंग यदि अप्रशस्त, धुंधले होंगे तो वे अशुभ माने जाएंगे। शुभता और अशुभता रंगों की चमक पर निर्भर है:

नमस्कार मन्त्र के जप के साथ जिन रंगों की कल्पना की जाती है, उनसे भी यही तथ्य सामने आता है। जैसे—णमो अरिहन्ताणं श्वेत रंग, णमोसिद्धाणं-लाल, णमो आयरियाणं-पीला, णमो उवज्झायाणं-हरा, णमो लोए सव्व साहूणं-काला। लेश्या के सन्दर्भ में कृष्ण लेश्या को सर्वाधिक निकृष्ट माना गया है पर मुनि धर्म के साथ जुड़ा कृष्ण वर्ण प्रशस्त रंग का वाचक है। वैदिक साधना पद्धति में ब्रह्मा की उपासना लाल रंग से की जाता है क्योंकि लाल रंग निर्माता का रंग है। विष्णु की उपासना काले रंग से की जाती है क्योंकि काला रंग संरक्षण का माना गया है। महेश की श्वेत रंग से क्योंकि श्वेत रंग संहार करने वाला है। इसीलिये ध्यान करते समय रंग-श्वास में चमकदार रंगों का श्वास लेने और उनसे अपने आपको भावित करने को बात कही जाती है।

लेश्या शुद्धि या लेश्या ध्यान

जैन आगमों में लेश्या शुद्धि के लिये कई साधन बतलाए हैं। उनमें ध्यान विशेष उल्लेखनीय है। प्रेक्षाध्यान पद्धति में भाव परिवर्तन के लिये, चेतना के जागरण के लिये रंगों का ध्यान महत्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि रंग का हमारे पूरे जीवन पर प्रभाव पड़ता है। प्रेक्षाध्यान साधना पद्धति आधुनिक ध्यान पद्धतियों में एक है। उसमें युवाचार्य महाप्रज्ञ ने लेश्याध्यान को एक महत्वपूर्ण अंग माना है। इस ध्यान में साधक चैतन्य केन्द्रों पर चित्त को एकाग्र कर वहाँ निश्चित रंगों का ध्यान करता है। ध्यान की पृष्ठभूमि में वह कायोत्सर्ग, अन्तर्यात्रा, दीर्घश्वास, शरीर-प्रेक्षा, चैतन्यकेन्द्र प्रेक्षा आदि को भी अच्छी तरह से साध लेता है।

चैतन्य केन्द्र हमारी चेतना और शक्ति की अभिव्यक्ति के स्रोत है। ये जब तक नहीं जागते, तब तक कृष्ण, नील, कपोत—तीन अप्रशस्त लेश्याएँ काम करती रहती है। व्यक्तित्व बदलाव के लिये हमें इन लेश्याओं का शुद्धिकरण

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करना होगा। रंग ध्यान द्वारा चैतन्य केन्द्रों को जगाना होगा क्योंकि केन्द्र (चक्र) रंग शक्ति के विशिष्ट स्रोत है। प्रत्येक चक्र भौतिक वातावरण और चेतना के उच्च स्तरों में से अपनी विशिष्ट रंग-किरणों के माध्यम से प्राण ऊर्जा की विशिष्ट तरंग को शोषित करता है। लेश्या ध्यान में आनन्द केन्द्र पर हरे रंग का, विशुद्धि केन्द्र पर नीले रंग का, दर्शन केन्द्र पर अरुण रंग का, ज्ञान केन्द्र पर पीले रंग का तथा ज्योति केन्द्र पर सफेद रंग का ध्यान किया जाता है।[२१] कृष्ण, नील और कापोत लेश्याएं अशुभ हैं। इसलिये उन्हीं केन्द्रों पर विशेष रूप से ध्यान किया जाता है जिनसे तेजस, पद्म और शुक्ल लेश्याएं जागती हैं। इसलिये तीन शुभ लेश्याओं का दर्शन केन्द्र, ज्ञान केन्द्र और ज्योति केन्द्र पर क्रमशः लाल, पीला और सफेद रंग का ध्यान किया जाता है। इन तीनों को प्रशस्त रंगों के रूप में स्वीकार किया गया है।[२२]

तेजोलेश्या ध्यान : जब तेजोलेश्या का ध्यान किया जाता है तो हम दर्शन केन्द्र पर बाल सूर्य जैसे लाल रंग का ध्यान करते हैं। लाल रंग अग्नि तत्त्व से सम्बन्धित है जो कि ऊर्जा का सार है। यह हमारी सारी सक्रियता, तेजस्विता, दीप्ति, प्रवृत्ति का स्रोत है। दर्शन केन्द्र पिटयूटरी ग्लैंड का क्षेत्र है, जिसे महाग्रन्थि कहा जाता हैं, जो अनेक ग्रन्थियों पर नियन्त्रण करती है। पिटयूटरी ग्लैंड सक्रिय होने पर एड्रोनल ग्रन्थि नियन्त्रित हो जाती है, जिसके कारण उभरने वाले काम वासना, उत्तेजना, आवेग आदि अनुशासित हो जाते हैं। दर्शन केन्द्र पर अरुण रंग के ध्यान करने से तेजस लेश्या के स्पन्दनों की अनुभूति से अन्तर्जगत की यात्रा प्रारम्भ होती है। आदतों में परिवर्तन शुरू होता है। मनोविज्ञान बताता है कि लाल रंग से आत्मदर्शन की यात्रा शुरू होती है। आगम कहता है—अध्यात्म की यात्रा तेजोलेश्या से शुरू होती है। इससे पहले कृष्ण, नील व कापोत तीन अशुभ लेश्याएं काम करती हैं, इसलिये व्यक्ति अन्तर्मुखी नहीं बन पाता।

तेजस लेश्या/तेजस शरीर जब जगता है, तब अनिर्वचनीय आनन्दानुभूति होती है। पदार्थ प्रतिबद्धता छूटती है। मन शक्तिशाली बनता है। ऊर्जा का उर्ध्वगमन होता होता है। आदमी में अनुग्रह विग्रह (वरदान और अभिशाप) की क्षमता पैदा होती है। सहज आनन्द की स्थिति उपलब्ध होती है। इसलिये इस अवस्था को "सुखासिका" कहा गया है। आगमों में लिखा है कि विशिष्ट ध्यान योग की साधना करने वाला एक वर्ष में इतनी तेजोलेश्या को उपलब्ध होता है जिससे उत्कृष्टतम भौतिक सुखों की अनुभूति अतिक्रान्त हो जाती है। उस आनन्द की तुलना किसी भी भौतिक पदार्थ से प्राप्त नहीं हो सकती।[२३] तेजोलेश्या और अतीन्द्रिय ज्ञान का भी गहरा सम्बन्ध है। तेजोलेश्या की विद्युत धारा से चैतन्य केन्द्र जागृत होते हैं और इन्हीं में अवधि ज्ञान अभिव्यक्त होता हैं।

पद्मलेश्या-ध्यान

पद्मलेश्या का रंग पीला है। पीला रंग न केवल चिन्तन, बौद्धिकता व मानसिक एकाग्रता का प्रतीत है, बल्कि धार्मिक कृत्यों में की जाने वाली भावनाओं से भी सम्बन्धित है। पीला रंग मानसिक प्रसन्नता का प्रतीक है। भारतीय योगियों ने इसे जीवन का रंग माना है। सामान्य रंग के रूप में यह आशा-वादिता, आनन्द और जीवन के प्रति संतुलित दृष्टिकोण को बढ़ाता है। मनोविज्ञान मानता है कि पीले रंग से चित्त की प्रसन्नता प्रकट होती है और दर्शन शक्ति का विकास होता है। दर्शन का अर्थ है—साक्षात्कार। लेश्याध्यान में पीले रंग का ध्यान ज्ञान केन्द्र पर किया जाता है। ज्ञान केन्द्र शरीर-शास्त्रीय भाषा में बृहद् मस्तिष्क का क्षेत्र है। इसे हठयोग में सहस्रार चक्र कहा जाता है। जब हम चमकते हुए पीले रंग का ध्यान करते है, तब जितेन्द्रिय होने की स्थिति निर्मित होती है। कृष्ण और नील लेश्या में व्यक्ति अजितेन्द्रिय होता है। पद्मलेश्या के परमाणु ठीक इसके विपरीत हैं। पद्मलेश्या ऊर्जा के उत्क्रमण की प्रक्रिया है। इसके जागने पर कषाय चेतना सिमटती है। आत्म नियन्त्रण पैदा होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुक्ल लेश्या ध्यान

शुक्ल लेश्या का ध्यान ज्योति केन्द्र पर पूर्णिमा के चन्द्रमा जैसे श्वेत रंग में किया जाता है। श्वेत रंग पवित्रता, शान्ति, सादगी और निर्वाण का द्योतक है। शुक्ल लेश्या उत्तेजना, आवेग, चिन्ता, तनाव, वासना, कषाय, क्रोध आदि को शान्त करती है। लेश्या ध्यान का लक्ष्य है—आत्मसाक्षात्कार। शुक्ल लेश्या द्वारा इस लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है। यहाँ से भौतिक और आध्यात्मिक जगत का अन्तर समझ में आने लग जाता है। आगम के अनुसार शुक्ल ध्यान की फलश्रुति है—अव्यय चेतना, अमूढ़ चेतना, विवेक चेतना और व्युत्सर्ग चेतना।[२४]

शरीरशास्त्रीय दृष्टि से ज्योति केन्द्र का स्थान पिनियल ग्रन्थि है। मनोविज्ञान का मानना है कि हमारे कषाय, कामवासना, असंयम, आसक्ति आदि संज्ञाओं के उत्तेजन और उपशमन का कार्य अवचेतन मस्तिष्क, हायोपेथेलेमस से होता है। उसके साथ इन दोनों केन्द्रों का गहरा सम्बन्ध है। हाइपोथेलेमेस का सीधा सम्बन्ध पिट्यूटरी और पिनियल के साथ है। विज्ञान बताता है कि १२–१३ वर्ष की उम्र के बाद पिनियल ग्लैण्ड का निष्क्रिय होना शुरू हो जाता है जिसके कारण क्रोध, काम, भय आदि संज्ञाएं उच्छृंखल बन जाती हैं। अपराधी मनोवृत्ति जागती है। जब ध्यान द्वारा इस ग्रन्थि को सक्रिय किया जाता है तो एक सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण होता है।

शुक्ल लेश्या का ध्यान शुभ मनोवृत्ति की सर्वोच्च भूमिका है। प्राणी उपशान्त, प्रसन्नचित्त और जितेन्द्रिय बन जाता है। मन, वचन और कर्मरूपता सध जाती है। प्राणी सदैव स्वधर्म और स्व-स्वरूप में लीन रहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लेश्या ध्यान से रासायनिक परिवर्तन होते है, पूरा भाव संस्थान बदलता है। उसके वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श सभी कुछ बदलते हैं। व्यक्ति जब तक मूर्च्छा में जीता है, तब तक उसे बुरे भाव, अप्रिय रंग, असह्य गन्ध, कड़वा रस, तीखा स्पर्श बाधा नहीं डालता, पर जब मूर्च्छा टूटती है, विवेक जागता है तब वह अशुभ वर्ण, स्पर्श से विरक्त होता है, उन्हें शुभ में बदलता है। यद्यपि लेश्या ध्यान हमारी मंजिल नहीं। हमारा अन्तिम उद्देश्य तो लेश्यातीत बनना है, पर इस तक पहुँचने के लिये हमें अशुभ से शुभ लेश्याओं में प्रवेश करना होगा, जिसके लिये लेश्याध्यान आध्यात्मिक विकास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण पड़ाव है। ध्यान की एकाग्रता, तन्मयता और ध्येय-ध्याता में अभिन्नता प्राप्त हो जाने पर ही आत्मविकास की दिशाएं खुल सकती है।

सन्दर्भ सूची

१. गणधर सुधर्मा स्वामी; **आचारांग सूत्र, प्रथम श्रुतस्कन्ध** (सं० मधुकर मुनि), आगमोदय प्रकाशन समिति, व्यावर, १९८०, ३,२,११८, पेज १०१

२. देवेन्द्र मुनि शास्त्री; **लेश्या : एक विश्लेषण** (बी० एल० नाहटा अभि० ग्रन्थ), नाहटा अभि० समिति, कलकत्ता, १९८६, पेज २/३६

३. सुधर्मा स्वामी; **भगवती सूत्र भाग ४**, सा० सं० रक्षक संघ, सैलाना, १९६८, पेज २०५६

४. — **उत्तराध्ययन** (सं० आ० चंदनाश्री), सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा, १९७२, पेज ३६२

५. अकलंक भट्ट; **तत्त्वार्थराजवार्तिक**—१, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, १९५३, पेज २३८

६. आर्य, श्याम; **प्रज्ञापना सूत्र**—२, आ० प्रकाशन समिति, व्यावर, १९८४, पेज २३९–८८

७. स्वामी शिवपूजनानंद सरस्वती; **रंगों की सूक्ष्मता और हम**, योगविद्या, बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, २१,११, १९८३, पेज २७

८. सुधर्मा स्वामी; **सूत्रकृतांग प्र० श्रु०**, जैन विश्व-भारती, लाडनूं, १९८३, ४|१७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. देखिये, निर्देश ३, पेज २०६१

१०. नेमचंद्र सिद्धान्तचक्रवर्ती; **गोम्मटसार जीवकांड**, परमश्रुत प्रभावक मंडल, अगास, १९७२, पेज २२५

११. देखिये, निर्देश ४, अध्ययन ३४, पेज ६५०

१२. युवाचार्य महाप्रज्ञ; **आभामंडल**, तुलसी अध्यात्म नीडं, लाडनूं, १९८४, पेज १३, ४१

१३. देखिये, निर्देश ८, सूत्रकृतांग, ४/१७

१४. एस० जी० जे० ओसले; **द पावर आव दी रेज**, पेज ४३

१५. वही ; **कलर मेडीटेशन**, पेज १५

१६. महर्षि व्यास **महाभारत**, शान्ति पर्व, २८८/५

१८. जे० डोडसन हैस; **कलर इन दी ट्रीटमेंट आव डिजीज**, पेज ६१

१९. देखिये, निर्देश १५, पेज १७

२०. देखिये निर्देश ६ पेज २३९-८८

२१. युवाचार्य महाप्रज्ञ, **लेश्या ध्यान**, तुलसी अध्यात्म नीडं, लाडनू, १९८४, पेज ५३

२२. देखिये, निर्देश १२, पेज ८५

२३. सुधर्मा स्वामी, **भगवती सूत्र ५**, सा० सं० रक्षक संघ, सैलाना, १९७०, पेज २३६?

२४. देखिये निर्देश १३, पेज ४/७०

●

जैसे कांटा चुभने पर सारे शरीर में पीड़ा होती है,
जैसे कांटे के निकल जाने पर शरीर निःशल्य हो जाता है।
वैसे ही अपने दोषों को न प्रकट करने वाला मायावी दुःखी होता है,
वैसे ही गुरु के समक्ष दोष प्रकट कर सुविशुद्ध सुखी हो जाता है॥

—समणसुत्तं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org